विपश्यना

साधकों का मासिक प्रेरणा पत्र

बुद्धवर्ष २५४८, श्रावण पूर्णिमा, ३१ जुलाई, २००४ वर्ष ३४ अंक २

धम्मवाणी

अनेक जातिसंसारं, सन्धाविस्सं अनिब्बिसं।
गहकारं गवेसन्तो, दुक्खा जाति पुनप्पुनं॥
गहकारक दिट्ठोसि, पुन गेहं न काहसि।
सब्बा ते फासुका भग्गा, गहकूटं विसङ्खतं।
विसङ्खारगतं चित्तं, तण्हानं खयमज्झगा॥

धम्मपद-- १५३-१५४.

(इस काया-रूपी) घर को बनाने वाले की खोज में (मैं) बिना रुके अनेक जन्मों तक (भव-) संसरण करता रहा, किंतु बार-बार दुःख(-मय) जन्म ही हाथ लगे। ये घर बनाने वाले! (अब) तू देख लिया गया है, (अब) फिर (तू) (नया) घर नहीं बना सकता। तेरी सारी कड़ियां टूट गयी हैं और घर का शिखर भी विशृंखलित हो गया है। चित्त पूरी तरह संस्काररहित हो गया है और तृष्णाओं का क्षय (निर्वाण) प्राप्त हो गया है।

मुनीन्द्र – मेरा मित्र

"मि. गोयन्का, जाओ। तातना यैता (साधना केंद्र) में भारत से आये हुए अपने मेहमान से मिल लो। चाहो तो उसके लिए शाकाहारी भोजन भी ले जाना।"

यह फोन मेरे मित्र म्यंमा के अटार्नी जनरल ऊ छां ठुं का था जो कि म्यंमा सरकार की बुद्ध शासन समिति का प्रमुख सचिव भी था। छट्ठ संगायन के बाद म्यंमा सरकार ने निर्णय किया कि विदेशों से कोई म्यंमा आकर के विपश्यना साधना सीखना चाहे तो उसे सरकारी अतिथि के रूप में आमंत्रित किया जायगा। इस योजना के अंतर्गत कई लोगों को आमंत्रित किया गया। इस सरकारी योजना में म्यंमा के कई गृहस्थों ने भी कुछ योगदान देकर पुण्यलाभ लिया। प्रधानमंत्री ऊ नू ने मुझे भी सूचना भिजवायी कि यदि चाहूं तो मैं भी इसमें भाग लेकर पुण्यलाभी हो सकता हूं। मैं तब तक विपश्यना से लाभान्वित हो चुका था। अतः चाहता था कि अधिक से अधिक लोग इस कल्याणी विद्या का लाभ उठाकर अपना जीवन सार्थक कर लें। ऐसे भाव मन में बार-बार उठते थे। अतः इस पुण्यकार्य के अवसर को मैंने अपना सौभाग्य समझा और इस सरकारी योजना में दो साधकों की यात्रा तथा अन्य आवश्यक व्यय के दान के लिए अपनी सहर्ष स्वीकृति दी। ऊ छां ठुं ने इस योजना के अंतर्गत हमारे परिवार के जिम्मे एक जापानी और एक भारतीय साधक के आतिथ्य का निर्णय किया।

यह वही भारतीय अतिथि था जो कि पिछले दिन ही रंगून पहुँचा था और म्यंमा सरकार ने इसे तातना यैता में ठहराया था। इसी से मिलने के लिए ऊ छां ठुं ने मुझे फोन किया था। मैं प्रसन्न चित्त से भोजन साथ लेकर के तातना यैता पहुँचा और अपने इस अतिथि से मिला। देखा, वह मेरी उम्र का एक दुबला पतला और नाटा व्यक्ति था। चेहरा बहुत शांत था, आंखों में विनम्रता समायी हुई थी। बातचीत से परिचय प्राप्त हुआ। वह बंगला देश के पूर्वी भाग के निवासी बरुआ समाज का व्यक्ति था और जन्मजात बुद्धानुयायी था। उसने आजीवन ब्रह्मचर्य का व्रत ले रखा था। उसने विवाह कर घर नहीं बसाया था, अतः अनागारिक कहलाता था। चीवर न लेकर भी सफेद वस्त्रों में भिक्षु का-सा एकाहारी जीवन जीता था। अपने समाज के अनेक लोगों के साथ वह भारत आ बसा था और बोधगया के बोधिमंदिर की प्रबंधक समिति के अंतर्गत व्यवस्थापक के पद पर सेवारत था। भारत में भगवान की बताई भगवती विपश्यना का सर्वथा विलोप हो जाने के कारण वह यहां इस विद्या को सीखने आया था। यही था वह अनागारिक मुनीन्द्र बरुआ जो समय बीतते-बीतते मेरा घनिष्ठ मित्र हो गया था और हम उसे सम्मान से मुनीन्द्रजी कहने लगे थे!

थोड़े दिनों के बाद उसने मुझे बताया कि उसे तातना यैता का भोजन रास आने लगा है। अतः उसके लिए नित्य भोजन भेजने का कष्ट हम न करें। अतः हमने उसे नित्य भोजन भेजना बंद कर दिया। परंतु वह पांच-दस दिन में एक बार भारतीय भोजन के लिए हमारे घर आ जाया करता था। देवी इलायची उसे भोजन परोसकर बहुत प्रसन्न होती थी क्योंकि वह बड़े स्वाद से भोजन ग्रहण करता था और इससे बहुत संतुष्ट व प्रसन्न होता था।

तीन महीने में उसका विपश्यना साधना का अभ्यास पूरा हुआ। तब उसने एक दिन इच्छा प्रकट की कि वह रंगून में कुछ महीने और रहकर अभिधम्मपिटक का अध्ययन करना चाहता है। सभी बुद्धानुयायी देशों में म्यंमा के अभिधम्म आचार्य प्रशंसित और प्रतिष्ठित हैं। इस गंभीर विषय का उनका ज्ञान बहुत गहन है, अतः यहां रहकर वह इसका लाभ उठाना चाहता था। तातना यैता में रहते हुए उसने म्यंमा के कई एक सद्गृहस्थों से मित्रता कर ली थी जो उस सरल स्वभावी और सादा जीवन जीने वाले उपासक को अपने घर में रखकर भोजन इत्यादि का प्रबंध करने के लिए उत्सुक थे। वह मेरी अनुमति चाहता था क्योंकि वह मेरा अतिथि था। मुझे इसमें भला क्या एतराज होता! उसके इस शुभ संकल्प से मैं प्रसन्न ही हुआ।

अब भी वह पांच-दस दिन में एक बार भारतीय भोजन ग्रहण करने के लिए हमारे घर आता रहा। इसके अतिरिक्त उसके आवश्यक दैनिक खर्चे की पूर्ति के लिए हमारे परिवार ने प्रबंध कर दिया था। उसकी मांग बहुत थोड़ी थी जो कि किसी भी सामान्य

गृहस्थ के लिए भारी नहीं थी। हमारे परिवार ने इसे अपना सौभाग्य ही माना।

इस प्रकार ब्रह्मचारी मुनीन्द्र ने नौ वर्ष म्यंमा में बिताये और अभिधम्म के साथ-साथ अन्य पिटकों का भी गंभीर अध्ययन किया। वह जब भारतीय भोजन के लिए घर पर आता और यदि वह छुट्टी का दिन होता तो उसके साथ धर्म संबंधी अथवा पालि भाषा संबंधी विचार-विमर्श करने का मुझे लाभ मिलता रहा। उन्हीं दिनों उसने रंगून के अन्य साधना केंद्रों में भी जा-जाकर अन्य अनेक साधना विधियों का भी अभ्यास किया।

इसे लेकर मेरे लिए एक गंभीर धर्मसंकट उत्पन्न हुआ। वह बहुधा साधना के बारे में मेरे अनुभवों को जानना चाहता था और इस बारे में मुझसे वार्तालाप करता था। मेरे अनुभव सुन करके वह सयाजी ऊ बा खिन द्वारा सिखायी जाने वाली लैडी सयाडो की साधना विधि के प्रति अत्यंत आकर्षित हुआ। वह म्यंमा की इस अत्यंत महत्त्वपूर्ण पुरातन विद्या को भी सीखना चाहता था। परंतु पूज्य गुरुदेव ने उसे शिविर में लेने से मना कर दिया। मैंने गुरुदेव से आग्रह किया और मेरे अतिरिक्त सयाजी का अन्य श्रद्धालु शिष्य ऊ लूं बो जो कि म्यंमा के पब्लिक सर्विस कमीशन का चेयरमैन था और मुनीन्द्र के प्रति उसे बहुत श्रद्धा थी, अतः उसने भी गुरुजी से आग्रह किया। परंतु गुरुदेव नहीं माने। उनकी अपनी कठिनाई थी।

कुछ दिनों पहले भारत का ही एक भिक्षु किसी साधना केंद्र में विपश्यना सीखने के लिए आया लेकिन तीन महीने का कोर्स पूरा करने के पहले ही वह मानसिक स्तर पर अत्यंत उद्विग्न हो उठा। मैं उसे भारतीय भोजन पहुँचाया करता था। एक बार उससे मिलने गया तो देखा कि उसकी मनोस्थिति बहुत बिगड़ी हुई थी। अतः वहां के भिक्षु आचार्य की अनुमति लेकर उसे अपने घर ले आया। यहां कुछ दिन रहकर वह कुछ स्वस्थ हुआ। उसे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि मैं भी एक विपश्यी साधक हूं। यह जानकर तो और अधिक प्रसन्नता हुई कि मेरे गुरुदेव सयाजी ऊ बा खिन हैं जिनसे उसका पुराना परिचय था। जापानी युद्ध के पहले वह म्यंमा रेल्वे का प्रमुख इंजीनियर था जबकि गुरुदेव वहां के चीफ अकाउन्टेंट थे। वह उनसे मिलने के लिए आतुर हुआ। मैं उसे गुरुदेव के पास ले गया। गुरुदेव का पुराना मित्र होने के कारण उन्होंने उसके अकेले के लिए विशेष शिविर लगाया। दस दिन पूरे होते-होते वह पूर्णतया स्वस्थ हो गया। उसके बाद भारत लौटने के पहले वह अपने युद्ध पूर्व के कुछ मित्रों से मिलने के लिए मांडले गया। वहां उसने दो-चार प्रवचन दिये जिनमें उसने गुरुदेव की पुरातन विपश्यना विधि की भूरि-भूरि प्रशंसा की। लेकिन साथ ही जिस साधना केंद्र में वह भारत से आते ही विपश्यना सीखने के लिए ठहरा था, उसकी निंदा भी की। जब वह रंगून लौटकर आया और गुरुदेव को यह सब मालूम हुआ तो वे बहुत अप्रसन्न हुए। उन्होंने कहा कि "किसी भी भिक्षु की तथा उसकी शिक्षा की निंदा करना अकुशल कर्म है। तुम्हें ऐसा नहीं करना चाहिए।" लेकिन वह अति उत्साह के मारे रंगून आकर हमारे घर में रहते हुए भी जगह-जगह इसी बात को दोहराता रहा कि लैडी सयाडो द्वारा प्रसारित पुरातन विपश्यना विधि ही ठीक है, बाकी सब में कोई न कोई दोष है। वह तो भारत लौट गया लेकिन इस बात को लेकर गुरुदेव के मन में बड़ा क्षोभ हुआ और उन्होंने यह निर्णय लिया कि कोई भी व्यक्ति किसी भिक्षु के पास विपश्यना सीखकर मेरे शिविर में सम्मिलित होना चाहे तो उसे अनुमति नहीं मिलेगी। वह किसी प्रकार की निंदा-प्रशंसा को उचित नहीं मानते थे। भिक्षुओं के प्रति उनके मन में स्वाभाविक श्रद्धा का भाव था। अतः उनके विरुद्ध कुछ भी कहा जाना उन्हें स्वीकार्य नहीं था। उनके इस निर्णय के कारण भाई मुनीन्द्र को उनके यहां साधना सीखने का अवसर नहीं मिल सका। इसको लेकर वह बहुत दुःखी भी था। परंतु मैं भी लाचार था।

नौ वर्ष म्यंमा में बुद्ध साहित्य का गंभीर अध्ययन करके भाई मुनीन्द्र भारत लौटकर बोधगया में बस गया।

जून १९६९ में जब मैं भारत आया तो यहां की परिस्थिति देखकर निराशा हुई। किसी के सक्रिय सहयोग के बिना दस दिन का निवासीय शिविर लगाना सर्वथा असंभव था। ऐसी दशा में धरम के प्रताप से चंद दिनों के भीतर ही अडुकिया परिवार ने मुंबई में विपश्यना शिविर लगाने का बीड़ा उठाया और उसे सफलतापूर्वक निभाया। तब से मुंबई और दक्षिण के अन्य स्थानों पर एक के बाद एक शिविर लगने लगे। परंतु उत्तर भारत में शिविर लगाने में बड़ी कठिनाई थी। इसके लिए मेरे परम मित्र श्री यशपाल जैन ने दिल्ली में बिरला मंदिर की अतिथिशाला में एक छोटे शिविर का प्रबंध किया और इस प्रकार उत्तर भारत में शिविर लगने का क्रम आरंभ हुआ। परंतु मैं बहुत उत्सुक था कि बोधगया में शिविर लगे। इसके लिए समन्वय आश्रम के प्रबंधक श्री द्वारको सुंदरानी आगे आए। उस शिविर में भाई मुनीन्द्र ने भी भरपूर सहयोग दिया। वह स्वयं भी शिविर में सम्मिलित होना चाहता था। परंतु जिसे पूज्य गुरुदेव ने शिविर में शामिल नहीं किया उसे बहुत चाहते हुए भी मैं कैसे ले सकता था? उसके अत्यंत आग्रह पर मैंने पूज्य गुरुदेव को रंगून फोन किया और उन्होंने तत्काल अनुमति दे दी। क्योंकि भारत में किसी भिक्षु द्वारा सिखायी जाने वाली विपश्यना को लेकर कोई प्रतिद्वंद्वात्मक कडुवाहट पैदा होने का डर नहीं था। भाई मुनीन्द्र शिविर में सम्मिलित होकर अत्यंत प्रसन्न हुआ! उसे सारे शरीर में नन्हें-नन्हें परमाणुओं के उदय-व्यय के अनित्यबोध की महत्त्वपूर्ण अनुभूति हुई। साधना के मार्ग में इसे भंगज्ञान का स्टेशन कहते हैं। शिविर के बाद भाई मुनीन्द्र ने एक अत्यंत भावभीना कृतज्ञताभरा पत्र गुरुदेव को लिखा।

वह इस शिविर से इतना संतुष्ट प्रसन्न हुआ कि उसके पास आने वाले सभी विदेशी साधक-साधिकाओं को मेरे शिविर में भेजने लगा। उनका भी कल्याण हुआ। मुनीन्द्र यह देखकर अत्यंत प्रसन्न-विभोर हुआ करता था।

वह कुछ दिनों बोधगया रहा और फिर अपने कुछ शिष्यों के आग्रह पर अमेरिका गया। परंतु वहां का जीवन उसे रास नहीं आया। वह भारत लौट आया। मुझसे मिला और यह इच्छा व्यक्त की कि वह अपने वृद्धावस्था के दिन धम्मगिरि पर साधना करते हुए बिताना चाहता है। मुझे अपने मित्र की सहायता कर सकने के चिंतन मात्र से अत्यंत प्रसन्नता हुई। उसे धम्मगिरि पर निवास के लिए एक अलग कमरा और एक शून्यागार का प्रबंध कर दिया गया। मेरे साधकों ने भी उसकी सेवा करने में आनंद का अनुभव किया। मेरा घनिष्ठ मित्र होने के कारण ही नहीं बल्कि उसके सादे जीवन और मिलनसार सौम्य स्वभाव के कारण सभी उससे प्रसन्न रहते थे। धम्मगिरि पर उसकी सभी दैनिक आवश्यकताओं का प्रबंध था। वह अपने जीवन के शेष वर्ष धम्मगिरि पर ही बिताते हुए अत्यंत प्रसन्न था। प्रत्येक दीर्घ शिविर में और मेरे स्वयं शिविर में

सम्मिलित होता था। बाकी समय भी साधना ही करता था। वह बीच-बीच में अपने परिचितों और परिजनों से मिलने के लिए साल में कुछ समय कलकत्तेजाया करता था। इस बार गया तो वहीं उसकी शरीर-च्युति हो गई। इस सत्पुरुष की निःसंदेह सद्गति हुई।

मुझे लगता है कि उसके साथ अनेक जन्मों से मेरा मैत्रीसंबंध रहा होगा जो इस जीवन में और अधिक पुष्ट हुआ। इस साधक मित्र का, इस साधक संत का मैत्रीसंबंध मेरे लिए अत्यंत आह्लादजनक रहा। साधक मित्र का सत्संग अत्यंत मंगलकारी होता है। उसका स्मरण होते ही मनमानस में मंगलमैत्री की सुखद उर्मियां अनायास जाग उठती हैं! देवलोक में उसका प्रभूत मंगल हो!

मंगलमित्र

सत्यनारायण गोयन्का

(अनागारिक मुनीन्द्रजी द्वारा उनके कल्याणमित्र गोयन्काजी के साथ पहले शिविर के पश्चात सयाजी ऊ बा खिन को लिखे गये पत्र का अंश यहां प्रस्तुत है – संपादक)

आदरणीय एवं प्रिय सयाजी,

कृपया आपके प्रति मेरे गहरे आदर एवं प्यारभरे व मैत्रीपूर्ण भावों को स्वीकार करें। आपको यह जानकर अवश्य ही प्रसन्नता होगी कि हमें इस अत्यंत ही पवित्र स्थल बोधगया पर दस-दिवसीय शिविर लगाने का अनुपम अवसर प्राप्त हुआ है। इस शिविर का संचालन मेरे धर्म-मित्र और कल्याण-मित्र श्री सत्यनारायण गोयन्का ने किया जो आपके समर्थ और निष्ठावान शिष्यों में से एक हैं। इस ध्यान प्रशिक्षण सेमिनार में २५ साधकों ने हिस्सा लिया जिनमें से ६ अलग-अलग देशों के संन्यासी थे। मैंने स्वयं भी इस सेमिनार में हिस्सा लिया था। इस विपश्यना शिविर से मैं अत्यंत लाभान्वित हुआ हूं। जिस तरह इतने कम समय में इस विधि से मैंने अपने भीतर ज्ञान के नये आयाम खुलते हुए पाए वह आश्चर्य की ही बात है। गंभीर और उत्साही साधक जिनके पास अपनी पुरानी पारमिताओं का संग्रह था वे अपने एकाग्रमन और बींधती हुई प्रज्ञा से अपने शरीर में रूपकलापों के प्रपंच को तुरंत देख पाए, अनुभव कर पाए और समझ पाए। शरीर के सत्य स्वरूप – उसके अनित्य स्वभाव – उसके चार महाभूतों में होते हुए सातत्यपूर्ण परिवर्तन को प्रज्ञा की दृष्टि से देख पाना सचमुच ही विस्मयकारक है।

जब भी मैं गहरी सजगता की अवस्था में रहा तब शरीर इतना संवेदनशील और जीवंत हो गया कि कभी-कभार इंन्द्रिय के द्वारों पर होता हुआ हल्का-सा स्पर्श भी महसूस किया और पूरा शरीर पानी के बुदबुदों की तरह उभरता और बिखरता हुआ पाया।

इन दस दिनों के दौरान मेरे धर्म-मित्र श्री गोयन्काजी साधकों को प्रतिशाम धर्म-प्रवचन देते थे। सारे प्रवचन भगवान बुद्ध द्वारा देशित धर्म के अलग-अलग पहलुओं को और उसके व्यावहारिक पक्ष को स्पष्ट करते थे, जो कि भगवान के उपदेशों के अनुरूप होते थे। ये प्रवचन इतने प्रेरणादायी, उत्प्रेरक और परिष्कारक होते थे कि मेरे म्यंमा से वापसी के बाद मुझे ऐसी सुंदर धम्मदेशना सुनने का अवसर नहीं मिला था। मुझे कभी यह अंदेशा नहीं था कि मेरा मित्र धर्म के सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों पक्ष की सच्ची एवं विशद व्याख्या करने में इतना निपुण है! मुझे बेहद खुशी है और मैं अपने आप को सौभाग्यशाली मानता हूं कि मैंने इसमें भाग लिया।

मेरे म्यंमा निवास के दौरान मुझे कई बार आपके ध्यानकेंद्र पर आपसे मुलाकात करने का अवसर प्राप्त हुआ था। मुझे वह जगह बहुत पसंद थी। वहां का वातावरण शांत व पवित्र था। मैं खूब प्रेरित हुआ था कि मैं वहां कुछ समय रह सकूं और आपके निर्देशन में ध्यानाभ्यास कर सकूं। आप मेरे प्रति बड़े सहृदयी और मधुर रहे। उन दिनों, कुछ कारणों की वजह से मैं वहां रहने और अभ्यास करने का अवसर प्राप्त नहीं कर सका और मेरी अंतरतम इच्छा को पूर्ण नहीं कर सका। मैं आपकी दुविधा समझ सकता हूं और हृदय की गहराईओं से आपकी मैत्री व सौहार्दता का सम्मान करता हूं।

.....

मेरी वह तीव्र इच्छा कि मैं आपके केंद्र में, आपके निर्देशन में ध्यानाभ्यास करूं, वह अब आपके सच्चे शिष्य के हाथों पूरी हुई है। दस-दिवसीय सेमिनार सफलतापूर्वक संतोषपूर्ण तरीके से १९ अप्रैल को समाप्त हुआ है। इसका परिणाम कल्पनातीत है। हमने कई चीजें सीखीं। सारे साधक इस दस-दिवसीय शिविर में सम्मिलित होकर अत्यंत प्रसन्न थे। मेरे भारत लौटने पर मैंने अपना जीवन धर्माभ्यास व धर्मप्रवचनों द्वारा बुद्धशासन और तत्संबंधित कार्य के प्रति समर्पित किया है। इन दस दिनों में मेरे ज्ञान में जो अभिवृद्धि हुई है उसे मैं मेरे धर्म-कार्य के लिए अमूल्य व बेशकीमती मानता हूं। इसका सारा श्रेय आपको ही जाता है और मैं आप व श्री गोयन्काजी के प्रति अत्यंत कृतज्ञ हूं। मैंने जो भी पुण्य अर्जित किया है – शीलपालन से, समाधि के अभ्यास से, और परिष्कृत प्रज्ञा से – उसे मैं आपको बांटता हूं। मेरी कामना है कि इस पुण्य के प्रभाव से आपकी आयु लंबी हो, आप तन-मन से स्वस्थ रहें जिससे आप शासन का कार्य कर सकें और अनेक लोगों को लाभ पहुँचा सकें।

धर्म की सत्य नियामता सभी सत्वों के सुख के लिए हमेशा शासन करे!

धर्मसेवा में आपका

अनागारिक मुनीन्द्र

मंगल मृत्यु

मध्य प्रदेश सरकार में मुख्य सचिव रहे (आई. ए. एस.) श्री मारुतिराज सिंह चौधरी ने १९९४ में विपश्यना साधना शुरू की तो इसके प्रमुख प्रशंसक बन गये और एक वर्ष बाद ही मध्यप्रदेश विपश्यना समिति के अध्यक्ष बने। भोपाल के विपश्यना केंद्र निर्माण में इनकी प्रमुख भूमिका रही और अनेकों के मंगल में सहायक हुए। इनकी पहल से ही भोपाल में जेल के बंदियों के लिए चार शिविर लगे। ८७ वर्षीय श्री चौधरी अपनी बीमारी के दौरान तो समता में रहे ही, मृत्यु के समय अत्यंत शांतचित्त से शरीर छोड़ा और स्थानीय लोगों के बीच एक अमिट छाप छोड़ने वाले सिद्ध हुए। निश्चित ही दिवंगत की सद्गति हुई। *(म. प्र. वि. समिति, भोपाल)*

अकोला की श्रीमती चंद्रभागा प्रह्लाद तायडे ने अंतिम सांस छोड़ने के पूर्व अपने आप्तजनों से बातचीत की और पू. गुरुजी की मंगल मैत्री की कैसेट सुनने की इच्छा व्यक्त की। इसे सुनते-सुनते उसने अंतिम सांस ले ली, जैसे गहरी नींद में सोई हो। घंटों बाद भी उसका चेहरा इतना शांत और सौम्य था कि लोग देख कर आश्चर्यचकित थे। १९९१ से अपने पहले शिविर के बाद वह लगातार ध्यान करती रही और ७-८ शिविरों में बैठ कर, ३ शिविरों में धर्मसेवा भी दी थी। स्वयं की नियमित साधना के साथ-साथ वह लोगों को सामूहिक साधना के लिए सतत प्रेरित करती रहती थी। *(प्रह्लाद वी. तायडे, अकोला)*

केंद्र-व्यवस्थापक की आवश्यकता

नागपुर के 'धम्मनाग विपश्यना केंद्र' की पूर्णकालिक देखभाल के लिए व्यवस्थापन कार्य में दक्ष साधक की आवश्यकता है, जिसने दीर्घ शिविर किया हो और उम्र ४५ से ६५ वर्ष के बीच हो। उपयुक्त व्यक्ति अपना बायोडाटा कल्याणमित्र चैरिटेबल ट्रस्ट (शिविर-संपर्क) पते पर लिख भेजें। *(सं.)*

वडोदरा में विपश्यना जागृति केंद्र

वडोदरा और आसपास के क्षेत्रों यथा – धर्मज, आणंद, पादरा, करजण, बोडेली, भरुच, गोधरा आदि के साधकों की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए एक प्रवृत्ति/जागृति केंद्र की स्थापना की गयी है जहां पर १०० से अधिक साधक एक दिवसीय शिविर, बाल शिविर, सामूहिक साधना, धर्मसेवक प्रशिक्षण और पालि कार्यशाला कर सकेंगे और इनके अतिरिक्त यहां विपश्यना संबंधी साहित्य, सीडी, कैसेट्स आदि भी मिलेंगी।

इस प्रवृत्ति स्थल को पूज्य गुरुजी ने **"धम्म भवन"** नाम से संबोधित किया है। इसके बड़े कंपाउड में अभी कुछ आवश्यक निर्माणकार्य बाकी है। तदर्थ बनी 'वडोदरा विपश्यना समिति' को ८०-जी के अंतर्गत आयकर सुविधा प्राप्त है। यह 'प्रवृत्ति केंद्र' वडोदरा के मोगर में निर्माणाधीन मुख्य केंद्र **"धम्मवट"** का भी पूरक सिद्ध होगा। साधक इस पुण्य क्षेत्र में अपनी पारमी पुष्ट करने का लाभ उठा सकते हैं।

संपर्क सूत्र – 'वडोदरा विपश्यना समिति'
३०१, 'बी' टावर, अल्कापुरी आर्केड,
वेलकम होटल के सामने, आर. सी. दत्त रोड,
वडोदरा- ३९०००७.
फोनः **०२६५**-२३४१३७५, २३४३३०२
फैक्स- २३३७३६१, ईमेल- **vvs04@hotmail.com**

दोहे धर्म के

इस नश्वर संसार में, ध्रुव शाश्वत ना कोय।
पानी के से बुलबुले, भंग भंग ही होय॥

किसको मैं शाश्वत कहूं, नित्य अचल ध्रुव सार।
नष्ट होय ज्यों बुद बुदा, विषयों का व्यापार॥

नन्हा सा परमाणु कण, या विशाल ब्रह्मांड।
नश्वर ही है मिट्टी कण, या मिट्टी का भांड॥

भूमंडल, ग्रह, उपग्रह, सूर्य चन्द्र नक्षत्र।
सभी मृत्यु आधीन हैं, नश्वरता सर्वत्र॥

शीत ताप वर्षा पवन, इनका पड़े प्रभाव।
विकृत होय विनष्ट हो, ऐसा रूप स्वभाव॥

नित्य मान इस जगत को, जो खोजे सुख भोग।
उस मूरख को सुख कहां? दुख का ही संयोग॥

केमिटो इंस्ट्रूमेंट्स (प्रा.) लिमिटेड
८, मोहता भवन, ई-मोजेस रोड, वरली, मुंबई-४०० ०१८
फोनः २४९३ ८८९३, फैक्सः २४९३ ६१६६
Email: arun@chemito.net
की मंगल कामनाओं सहित

दूहा धरम रा

ईं काया रै रूप रो, बिरथा करै गरूर।
खिल्यो फूल मुरझावसी, जर जर होसी नूर॥

काया ही तेरी नहीं, छुटसी हो निस्प्राण।
तो ईं भोतिक जगत मँह, कुण तेरो नादान?

मेरो मेरो कर मर्यो, मेरो हुयो न कोय।
जद जग स्यूं जाणो पड्यो, संग चल्यो ना कोय॥

के ल्यायो थो साथ रै? के ले ज्यासी साथ?
आयो खाली हाथ ही, जासी खाली हाथ॥

आगै पीछै छूटसी, एक एक रो संग।
सुत नारी धन बंधु स्यूं, होय सदा नीसंग॥

सदा बदळतो ही रवै, अब छाया अब धूप।
कदै एक सो ना रवै, ईं धरती रो रूप॥

कीर्ति साड़ी सेंटर
६१६, सदाशिव पेठ, लक्ष्मी रोड,
पुणे- ४११ ०३०
फोन- ०२०-२४४५ ५३९३
की मंगल कामनाओं सहित

'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादकः राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३, दूरभाष : (०२५५३) २४४०८६, २४४०७६.
मुद्रण स्थान : अक्षर चित्र प्रिंटिंग प्रेस, ६९- बी रोड, सातपुर, नाशिक-४२२००७. **बुद्धवर्ष २५४८, श्रावण पूर्णिमा, ३१ जुलाई, २००४**

वार्षिक शुल्क रु. ३०/-, विदेश में US $ 10, **आजीवन शुल्क** रु. ५००/-, " US $ 100. **'विपश्यना' रजि. नं. १९१५६**/७१. Regn. No. AR/NSK-46/2003-05

Licenced to post w**ithout Prepayment of postage** -- Licence number-- **AR/NSK-WP/3**
Posting day- Purnima of Every Month, Posted at **Igatpuri-422403,** Dist. Nashik (M.S.)

If not delivered please return to:-
विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - ४२२४०३
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
दूरभाष : (०२५५३) २४४०७६
फैक्स : (०२५५३) २४४१७६
Website: www.vri.dhamma.org
e-mail: info@giri.dhamma.org